श्रीमद्भागवतम्

स्कन्ध 3

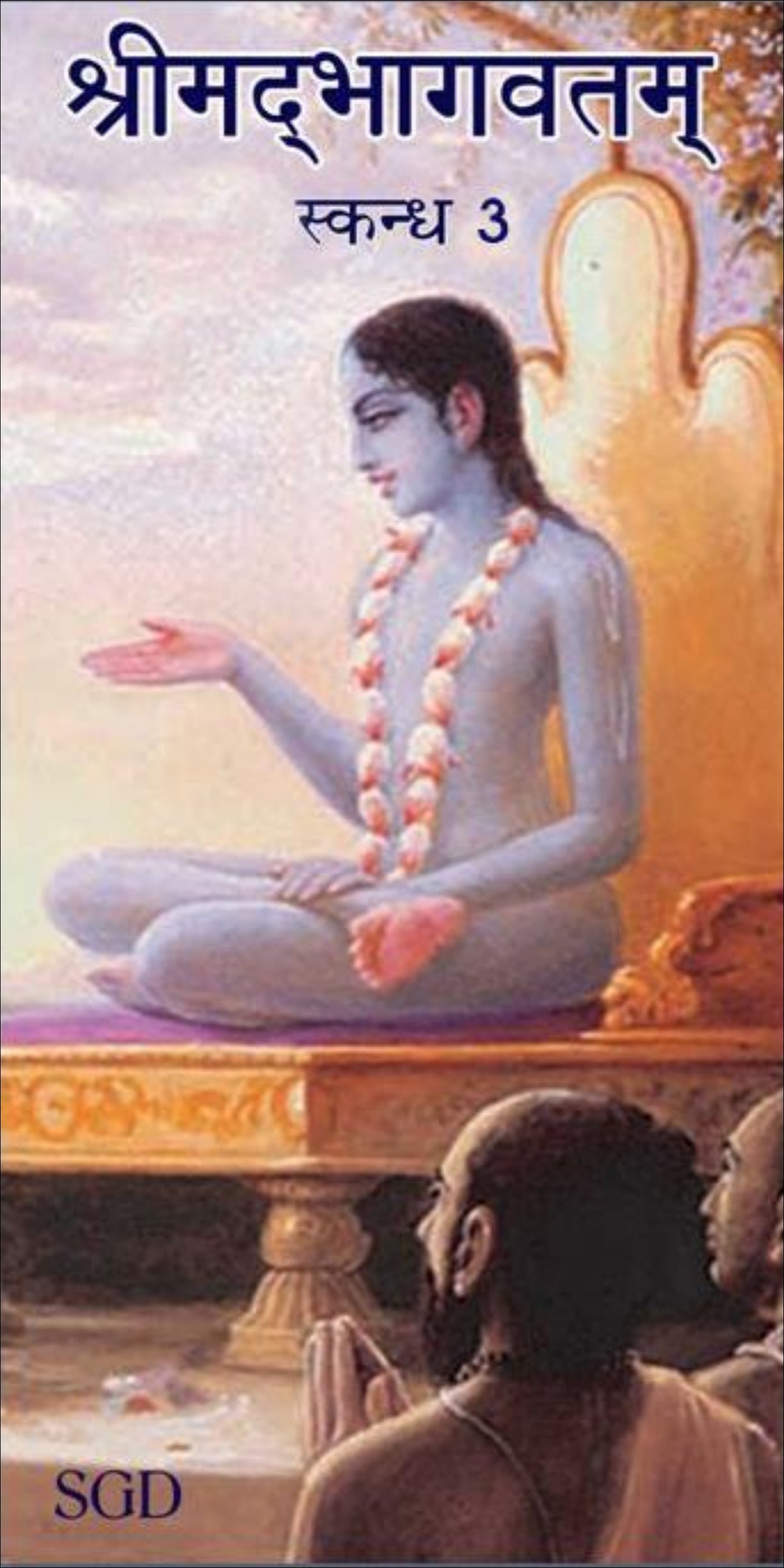

SGD

श्रीमद् भागवत पुराण

अध्याय 22

कर्दममुनि तथा देवहूति का परिणय

श्रीलगुरुदेव

श्लोक 1: श्रीमैत्रेय ने कहा— सम्राट के अनेक गुणों तथा तथा कार्यों की महानता का वर्णन करने के पश्चात् मुनि शान्त हो गये और राजा ने संकोचवश उन्हें इस प्रकार से सम्बोधित किया।

श्लोक 2: मनु ने कहा— वेदस्वरूप ब्रह्मा ने वैदिक ज्ञान के विस्तार हेतु अपने मुख से आप जैसे ब्राह्मणों को उत्पन्न किया है, जो तप,

ज्ञान तथा योग से युक्त और इन्द्रियतृप्ति से विमुख हैं।

श्लोक 3: ब्राह्मणों की रक्षा के लिए सहस्र-पाद विराट पुरुष ने हम क्षत्रियों को अपनी सहस्र भुजाओं से उत्पन्न किया। अत: ब्राह्मणों को उनका हृदय और क्षत्रियों को उनकी भुजाएँ कहते हैं।

श्लोक 4: इसीलिए ब्राह्मण तथा क्षत्रिय एक दूसरे की और साथ ही स्वयं की रक्षा करते हैं। कार्य-कारण रूप तथा निर्विकार होकर भगवान्

स्वयं एक दूसरे के माध्यम से उनकी रक्षा करते हैं।

श्लोक 5: अब आपके दर्शन मात्र से मेरे सारे सन्देह दूर हो चुके हैं, क्योंकि आपने कृपापूर्वक अपनी प्रजा की रक्षा के लिए उत्सुक राजा के कर्तव्य की सुस्पष्ट व्याख्या की है।

श्लोक 6: यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे आपके दर्शन हो सके क्योंकि जिन लोगों ने अपने मन तथा इन्द्रियों को वश में नहीं किया उन्हें आपके दर्शन दुर्लभ हैं। मैं आपके चरणों की

धूलि को शिर से स्पर्श करके और भी कृतकृत्य हुआ हूँ।

श्लोक 7: सौभाग्य से मुझे आपके द्वारा उपदेश प्राप्त हुआ है और इस प्रकार आपने मेरे ऊपर महती कृपा की है। मैं भगवान् को धन्यवाद देता हूँ कि मैं अपने कान खोलकर आपके विमल शब्दों को सुन रहा हूँ।

श्लोक 8: हे मुनि, कृपापूर्वक मुझ दीन की प्रार्थना सुनें, क्योंकि मेरा मन अपनी पुत्री के स्नेह से अत्यन्त उद्विग्न है।

श्लोक 9: मेरी पुत्री प्रियव्रत तथा उत्तानपाद की बहन है। वह आयु, शील, गुण आदि में अपने अनुकूल पति की तलाश में है।

श्लोक 10: जब से इसने नारद मुनि से आपके उत्तम चरित्र, विद्या, रूप, वय (आयु) तथा अन्य गुणों के विषय में सुना है तब से यह अपना मन आपमें स्थिर कर चुकी है।

श्लोक 11: अत: हे ब्राह्मणश्रेष्ठ, आप इसे स्वीकार करें, क्योंकि मैं इसे श्रद्धापूर्वक अर्पित कर रहा हूँ। यह सभी प्रकार से आपकी पत्नी होने

और आपकी गृहस्थी के कार्यों को चलाने में सर्वथा योग्य है।

श्लोक 12: स्वत: प्राप्त होने वाली भेंट का निरादर नितान्त विरक्त पुरुष के लिए भी प्रशंसनीय नहीं है, फिर विषयासक्त के लिए तो कहना ही क्या है।

श्लोक 13: जो स्वत: प्राप्त भेंट का पहले अनादर करता है और बाद में कंजूस से वर माँगता है, वह अपने विस्तीर्ण यश को खो देता है और अन्यों द्वारा अवमानना से उसका मान भंग होता है।

श्लोक 14: स्वायंभुव मनु ने कहा—हे विद्वान, मैंने सुना है कि आप ब्याह के इच्छुक हैं। कृपया मेरे द्वारा दान में दी जाने वाली (अर्पित) कन्या को स्वीकार करें, क्योंकि आपने आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत नहीं ले रखा है।

श्लोक 15: महामुनि ने उत्तर दिया—निस्सन्देह मैं विवाह का इच्छुक हूँ और आपकी कन्या ने न किसी से विवाह किया है और न ही किसी दूसरे को वचन दिया है। अत:

वैदिक पद्धति के अनुसार हम दोनों का विवाह हो सकता है।

श्लोक 16: आप अपनी पुत्री की, वेदों द्वारा स्वीकृत विवाह-इच्छा की पूर्ति करें। उसको कौन नहीं ग्रहण करना चाहेगा? वह इतनी सुन्दर है कि उसकी शारीरिक कान्ति ही उसके आभूषणों की सुन्दरता को मात कर रही है।

श्लोक 17: मैंने सुना है कि आपकी कन्या को महल की छत पर गेंद खेलते हुए देखकर महान् गन्धर्व विश्वावसु मोहवश अपने विमान से गिर

पड़ा, क्योंकि वह अपने नूपुरों की ध्वनि तथा चञ्चल नेत्रों के कारण अत्यन्त सुन्दरी लग रही थी।

श्लोक 18: ऐसा कौन है, जो स्त्रियों में शिरोमणि, स्वायंभुव मनु की पुत्री और उत्तानपाद की बहन का समादर नहीं करेगा? जिन लोगों ने कभी श्रीलक्ष्मी जी के चरणों की पूजा नहीं की है, उन्हें तो इसका दर्शन तक नहीं हो सकता, फिर भी यह स्वेच्छा से मेरी अर्द्धांगिनी बनने आई है।

श्लोक 19: अत: इस कुँवारी को मैं अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार

करूँगा, किन्तु इस शर्त के साथ कि जब यह मेरा वीर्य धारण कर चुकेगी तो मैं परम सिद्ध पुरुषों के समान भक्ति- योग को स्वीकार करूँगा। इस विधि को भगवान् विष्णु ने बताया है और यह द्वेष रहित है।

श्लोक 20: मेरे लिए तो सर्वोच्च अधिकारी अनन्त श्रीभगवान् हैं जिनसे यह विचित्र सृष्टि उद्भूत होती है और जिन पर इसका भरण तथा विलय आश्रित है। वे उन समस्त प्रजापतियों के मूल हैं, जो इस संसार

में जीवात्माओं को उत्पन्न करने वाले महापुरुष हैं।

श्लोक 21: श्री मैत्रेय ने कहा—हे योद्धा विदुर, कर्दम मुनि ने केवल इतना ही कहा और कमलनाभ पूज्य भगवान् विष्णु का चिन्तन करते हुए वह मौन हो गये। वे उसी मौन में हँस पड़े जिससे उनके मुखमण्डल पर देवहूति आकृष्ट हो गई और वह मुनि का ध्यान करने लगी।

श्लोक 22: रानी (शतरूपा) तथा देवहूति दोनों के दृढ़ संकल्प को स्पष्ट रुप से जानलेने पर सम्राट (मनु) ने

अपनी पुत्री को समान गुणों से युक्त मुनि (कर्दम) को अर्पित कर दिया।

श्लोक 23: महारानी शतरूपा ने वर-वधू (बेटी-दामाद) को प्रेमपूर्वक अवसर के अनुकूल अनेक बहुमूल्य भेंटें, यथा आभूषण, वस्त्र तथा गृहस्थी की वस्तुएँ प्रदान कीं।

श्लोक 24: इस प्रकार अपनी पुत्री को योग्य वर को प्रदान करके अपनी जिम्मेदारी से मुक्त होकर स्वायंभुव मनु का मन वियोग के कारण विचलित हो उठा और उन्होंने

अपनी प्यारी पुत्री को दोनों बाहों में भर लिया।

श्लोक 25: सम्राट अपनी पुत्री के वियोग को न सह सके, अत: उनके नेत्रों से बारम्बार अश्रु झरने लगे और उनकी पुत्री का सिर भीग गया। वे विलख पड़े 'मेरी माता, मेरी प्यारी बेटी।'

श्लोक 26-27: तब महर्षि से आज्ञा लेते हुए और उनकी अनुमति पाकर राजा अपनी पत्नी के साथ रथ में सवार हुआ और अपने सेवकों सहित अपनी राजधानी के लिए चल

पड़ा। रास्ते भर वे साधु पुरुषों के लिए अनुकूल सरस्वती नदी के दोनों ओर सुहावने तटों पर उनके शान्त एवं सुन्दर आश्रमों की समृद्धि को देखते रहे।

श्लोक 28: राजा का आगमन जानकर उसकी प्रजा अपार प्रसन्नता से ब्रह्मावर्त से बाहर निकल आई और वापस आते हुए अपने राजा का गीतों, स्तुतियों तथा वाद्य संगीत से सम्मान किया।

श्लोक 29-30: सभी प्रकार की सम्पदा में धनी बर्हिष्मती नगरी का

यह नाम इसलिए पड़ा, क्योंकि जब भगवान् ने अपने आपको वराह रूप में प्रकट किया, तो भगवान् विष्णु का बाल (रोम) उनके शरीर से नीचे गिर पड़ा। जब उन्होंने अपना शरीर हिलाया तो जो बाल नीचे गिरा वह सदैव हरे भरे रहने वाले उन कुश तथा काँस में बदल गया जिनके द्वारा ऋषियों ने भगवान् विष्णु की तब पूजा की थी जब उन्होंने यज्ञों को सम्पन्न करने में बाधा डालने वाले असुरों को हराया था।

श्लोक 31: मनु ने कुश तथा काँस की बनी आसनी बिछाई और श्रीभगवान् की अर्चना की जिनकी कृपा से उन्हें पृथ्वी मंडल का राज्य प्राप्त हुआ था।

श्लोक 32: जिस बर्हिष्मती नगरी में मनु पहले से रहते थे उसमें प्रवेश करने के पश्चात् वे अपने महल में गये जो सांसारिक त्रय-तापों को नष्ट करने वाले वातावरण से परिव्याप्त था।

श्लोक 33: स्वायंभुव मनु अपनी पत्नी तथा प्रजा सहित जीवन का आनन्द उठाते रहे और उन्होंने धर्म

के विरुद्ध अवांछित नियमों से विचलित हुए बिना अपनी इच्छाओं की पूर्ति की। गन्धर्वगण अपनी भार्याओं सहित सम्राट की कीर्ति का गान करते और सम्राट प्रतिदिन उषाकाल में अत्यन्त प्रेमभाव से पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की लीलाओं का श्रवण करते थे।

श्लोक 34: इस प्रकार स्वयंभुव मनु साधु-सदृश राजा थे। भौतिक सुख में लिप्त रहकर भी वे निम्नकोटि के जीवन की ओर आकृष्ट नहीं थे, क्योंकि वे निरन्तर कृष्णभावनामृत के

वातावरण में भौतिक सुख का भोग कर रहे थे।

श्लोक 35: फलत: धीरे-धीरे उनके जीवन का अन्त-समय आ पहुँचा आया; किन्तु उनका दीर्घ जीवन, जो मन्वन्तर कल्प से युक्त है, व्यर्थ नहीं गया क्योंकि वे सदैव भगवान् की लीलाओं के श्रवण, चिन्तन, लेखन तथा कीर्तन में व्यस्त रहे।

श्लोक 36: उन्होंने निरन्तर वासुदेव का ध्यान करते और उन्हीं का गुणानुवाद करते इकहत्तर चतुर्युग

(७१ × ४३,२०,००० वर्ष) पूरे किये। इस प्रकार उन्होंने तीनों लक्ष्यों को पार कर लिया।

श्लोक 37: अत: हे विदुर, जो व्यक्ति भगवान् कृष्ण के शरणागत हैं, भला वे किस प्रकार शरीर, मन, प्रकृति, अन्य मनुष्यों तथा जीवित प्राणियों से सम्बन्धित कष्टों में पड़ सकते हैं।

श्लोक 38: कुछ मुनियों के पूछे जाने पर उन्होंने (स्वायंभुव मनु ने) समस्त जीवों पर दया करके मनुष्य के

सामान्य पवित्र कर्तव्यों तथा वर्णों और आश्रमों का उपदेश दिया।

श्लोक 39: मैंने तुमसे आदि सम्राट स्वायंभुव मनु के अद्भुत चरित्र का वर्णन किया। उनकी ख्याति वर्णन के योग्य है। अब ध्यान से उनकी पुत्री देवहूति के अभ्युदय का वर्णन सुनो।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव